RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-05
Issue-11
November-2020

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]
DOI: https://doi.org/10.31305/rrijm.2020.v05.i11.020

मानव–अधिकारः उद्‌गम एवं ऐतिहासिक विकास

शाइस्ता बी

शोध छात्रा, राजनीति विज्ञान विभाग, डी0एस0बी0 परिसर, नैनीताल।

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 14 November 2020

Keywords
मानवाधिकार, ऐतिहासिक विकास, आत्म सुरक्षा, सामाजिक अधिकार

***Corresponding Author**
Email: shaistabi786[at]gmail.com

ABSTRACT

मानवाधिकार सामान्यता, वे अधिकार हैं जो मानव होने के नाते, प्रत्येक मानव को बिना किसी भेदभाव के जन्म के साथ ही प्राप्त होते हैं। इसके बिना कोई व्यक्ति अपना बौद्धिक मानसिक, शारीरिक, सामाजिक, नैतिक व आर्थिक विकास नही कर सकता है। यह मानव की गरिमा स्वतंत्रता के लिये आवश्यक है। मानव जाति के लिए मानवाधिकारों का अत्याधिक महत्व है। अतः इसे मूल अधिकार, अन्तर्निहित अधिकार, प्राकृतिक अधिकार, आधारभूत अधिकार व जन्म अधिकार भी कहा जाता है।

शाब्दिक दृष्टि से देखा जाय तो मानवधिकार का अंग्रेजी अनुवाद, जो दो शब्दों से संयोजन से बना है। 'Human' यानि मानव शब्द यूनानी शब्द एन्थ्रोपॉस से बना है और दूसरा शब्द 'Right' यानि अधिकार एक विस्तृत विचारधारा है। वस्तुतः अधिकारों का अस्तित्व संगठित समाज में ही सम्भव है। यह सर्वांगीण विकास हेतु अति आवश्यक है। प्रो0 आशीर्वादम् के अनुसार, ''अधिकार मनुष्य को प्रकृति से मिले हैं और उसके व्यक्तित्व में निहित हैं वे मनुष्य की प्रकृति के वैसे ही अंश है जैसे उसके शरीर की त्वचा का रंग है।'' लॉस्की ने लिखा है, ''अधिकार मानव जीवन की परिस्थितियाँ हैं जिसके बिना कोई व्यक्ति अपना पूर्ण विकास नही कर सकता है।''

ग्रीक और रोमन समय में भी मानवाधिकारों का अस्तित्व देखा जा सकता है। मानवाधिकारों की पश्चिम में उत्पति के विचार विशेष रूप से अधिकारो की प्राप्ति की प्रक्रिया को लेकर वाद–विवाद का एक लम्बा इतिहास रहा है।

प्रस्तावना

मानवाधिकार की चर्चा करने से पूर्व यह भी जानना होगा कि मानवाधिकार क्या है। सार रूप में हम कह सकते हैं कि मानवाधिकार मानव की वह अधिकृत संपदा है जो मनुष्य को अन्य प्राणियों से अलग करती है। दो पक्षों के मध्य किसी एक का अन्य के प्रति कर्तव्य उस अन्य के अधिकार को जन्म देता है और परस्पर एक–दूसरे के प्रति कर्तव्य परायणता से सभी के अधिकार सुरक्षित रह सकते है।

मानव जाति के इतिहास में मानवाधिकार अभियान एक सर्वाधिक सशक्त आन्दोलन है। संगठित एवं सशक्त मानव समूहों द्वारा, जिसमें 'राज्य' अग्रणी रहा है, मानव का उत्पीड़न , दमन, शोषण तथा वंचन इतिहास का एक तथ्य है। 'सत्ता' किसी भी रूप में मानव के लिये घातक सिद्ध हुयी है। अतः मानवाधिकार आन्दोलन मूलतः सत्ता की निरंकुशता व स्वेच्छाचारिता के विरूद्ध एक ऐतिहासिक अभियान है। मानवाधिकार की अवधारणा इसी आन्दोलन की एक स्वाभाविक परिणति है।

मानवाधिकारों का दार्शनिक आधार

मानवाधिकार का उदय विचार के रूप में एक लंबी प्रक्रिया का उपज है। यह एक ऐसा विचार है जिसमें बदलती हुई सामाजिक परिस्थितियों और समय के साथ विभिन्न प्रकार के परिवर्तन हुए हैं। प्लेटो ने अपने दर्शन में न्याय की प्रभावशाली योजना में नागरिकों की रक्षा के लिए व्यस्थित प्रयास किए। प्लेटो का अनुसरण करते हुए उसके शिष्य अरस्तू ने तत्कालीन ग्रीक समाज में मूल्य, न्याय और व्यक्ति के अधिकारों का विवेचन किया है। सिसरो (106–43 B.C.) ने बाद के प्राकृतिक कानूनी सिद्धानों की दार्शनिक नींव रखी। बाद में धार्मिक सार्वभौमिकतावादी जैसे थॉमस एक्वीनास (1225–1274) तथा अन्य विचारकों ने मानवीय प्रतिष्ठा क मूलभूत मूल्यों और प्राकृतिक कानून की सार्वभैमिकता पर अपने तर्को को आधार बनाया। मानवाधिकारों से संबंधित अवधारणा के जन्म के रूप में अत्यधिक व्यापक विचारों का प्रयास सामाजिक समझौते के परापंरागत लेखों में मिलता है। हॉब्स, लॉक, रूसो ने राज्य के मनमाने व्यवहार से व्यक्ति की रक्षा के लिए दृढ़ प्रयत्न किए। तीनों विचारकों ने राजा के दैनिक अधिकारों पर प्रश्नचिन्ह लगाए तथा इसके साथ–साथ व्यक्ति और राज्य के बीच समझौते को नियमित करने वाली संस्था के रूप में राज्य को सम्पुष्ट किया। इन तीनों विचारकों के सामाजिक समझौते और व्यक्ति के अधिकारों की व्याख्या करने के अपने अलग–अलग तरीके थे, परन्तु फिर भी इन तीनों ही विचारकों में व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा करने में राज्य की भूमिका की समानता थी।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

थॉमस हॉब्स ने 'लैवियाथन' नामक पुस्तक की रचना की थी। हॉब्स के अनुसार, 'एक समझौता हुआ उस समझौते के द्वारा व्यक्ति ने अपनी रक्षा के लिए सारे अधिकार राजा को सौंप दिए। अब 'लैवियाथन' इतना शक्तिशाली हो गया कि वह राज्य की निरकुंश प्रकृति से व्यक्ति की रक्षा कर सके।

जान लॉक ने राज्य की प्रकृति के मूल्यांकन के लिए हाब्स की तरह सामाजिक समझौते को स्वीकार किया परन्तु व्यक्तिगत प्रकृति की उसकी धारणा हाब्स से भिन्न थी। लॉक के अनुसार प्रारंभिक अवस्था मे व्याक्ति शांतिप्रिय विनम्र और भोला–भाला था। लॉक के अनुसार राज्य का उदय व्यक्ति के सम्पति और जीवन रक्षा के अधिकारो के लिए हुआ था। वास्तव मे लॉक अधिकारो का घोषणा पत्र तथा ईसाई परम्परा के बीच संतुलन बनाना चाहता था इस प्रकार से जॉन लॉक ने बाद मे प्रकाश मे आने वाले मानवधिकारो के विचारों की नीव रखी।

थॉमस पेन ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'व्यक्ति के अधिकार' में फ्रांसीसी और अमेरिकी क्रांतियों की विवेचना की है और व्यक्ति के आधारभूत अधिकारों को रेखांकित किया है। उन्होंने व्यक्ति की स्वतंत्रता तथा राज्य का व्यक्ति के जीवन मे न्यूनतम हस्तक्षेप पर बल दिया। लॉक की तरह पेन भी व्यक्ति के प्राकृतिक अधिकारों के प्रति दृढ़संकल्प थे जैसे विचार का अधिकार और प्रसन्नता तथा स्वतंत्रता कर अधिकार।पेन के तार्क्रिक विचारों का अनुसरण करते हुए मैरी वालस्टोन क्राफ्ट ने 'A Vindication of the Rights of Women' की रचना की जो बाद मे महिला अधिकारों के आंदोलन के प्रभावशाली स्रोत के रूप में उभरी।

उद्देश्य

- मानवाधिकारों की प्रकृति को समझना।
- मानवाधिकारों के ऐतिहासिक विकास के बारे में जानना तथा वर्तमान स्थिति को समझना।

शोध क्रियाविधि

प्रस्तुत शोधपत्र में विषय से सम्बन्धित तथ्यों के संकलन हेतु द्वितीयक स्रोतों जैसे– प्रस्तुत पत्रिकाओं, शोध ग्रन्थों तथा पुस्तकों का अध्ययन किया गया है। साथ ही विश्लेषणात्मक एवं वर्णनात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है।

मानव अधिकार का ऐतिहासिक विकास

इस बात पर वास्तव में ध्यान देना चाहिए कि 1945 से (द्वितीय विश्व युद्ध के बाद से) मानवाधिकार की धारणा ने पाश्चात्य इतिहास और अंतराष्ट्रीय संबंधों में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। परन्तु अभी भी कोई इन अधिकारों की वास्तविक उत्पत्ति और प्रकृति से संबन्धित प्रश्नों की विश्वसनीय व्याख्या नहीं कर सका हैं। जहाँ एक ओर यह कहा जाता है कि मानवाधिकारों की धारणा का जन्म ब्रह्मविद्या, दर्शन और कानून से हुआ था; वही पाश्चात्य विचारों के अनुसार प्राकृतिक अधिकारों की अवधारणा का विकास सबसे पहले सम्पत्ति के अधिकार को आलोचना से बचाने के लिए आज नागरिक और राजनीतिक अधिकार कहे जाने वाले अधिकारों का जन्म हुआ था। इन अधिकारो की अवधारणा व्यक्ति के आपस में व्यवहार करने वाले मानकों को निर्धारित करती थी, समकालीन मानवाधिकारों में व्यवहार के इस मानकीकरण का विस्तार किया गया हैं अर्थात मानवाधिकारों का प्रारंभ इस बात के निर्धारण के लिए हुआ कि सरकार को कौन से कार्य करने चाहिए और कौन से कार्य नहीं करने चाहिए।

मानवाधिकारों के इतिहास को मानवाधिकारों पर प्रकाश डालने वाले कारणों और अर्थ के रूप में समझा जा सकता है। कुछ विचारकों का मत है कि 1945 में संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना से पूर्व मानवाधिकारों का इतिहास नाममात्र का था। फिर भी सामान्य विचार यही है कि आज के मानवाधिकारों की अवधारणा का एक लंम्बा इतिहास रहा है। इस मान्यता से इसकी आधुनिक अवधारणा, ऐतिहासिक आधार और आदर्शों के निरीक्षण में सहायता मिलती है। मानवाधिकारों की उत्पत्ति के प्रश्न के बारे में विभिन्न मान्यताएं हैं और उत्पत्ति के स्थान की अलग अलग मान्यताओं के कारण यह प्रश्न सदैव विवादो से घिरा रहता हैं। कुछ विचारकों का तर्क है कि संसार के विभिन्न धर्मो और दर्शनों में मानवाधिकारों का सार्वभौमिक इतिहास मौजूदा है जबकि कुछ विचारकों का मानना है कि इनका जन्म पश्चिम में हुआ था और द्वितीय विश्व युद्ध के बाद हाल ही मे इनका स्वरूप सार्वभौमिक हुआ है। इन विभिन्न मान्यताओं के बावजूद सबसे अधिक मान्यता है कि मानवाधिकारों का जन्म पश्चिमी राज्यों में हुआ था। परन्तु फिर भी गैर पाश्चात्य संस्कृतियों में मानव अधिकार एक नैतिक अवधारणा के रूप में विद्यमान है जबकि इन राष्ट्रों की परम्पराओं मे मानवाधिकारों की अवधारणा का अभाव है।

मानवाधिकारों की तीन पीढीयों का वर्गीकरण

अन्तर्राष्ट्रीय विधि के उपबन्धों के अनुसार लूईस बी0 सोन ने मानवाधिकारों को निम्नलिखित भागों में विभक्त किया है –

- सिविल और राजनैतिक अधिकार (प्रथम पीढी के अधिकार)
- आर्थिक, समाजिक और सांस्कृतिक अधिकार (द्वितीय पीढी के अधिकार)
- सामूहिक अधिकार (तृतीय पीढी के अधिकार)

यद्यपि मानवाधिकार जन्मजात, मौलिक, अहरणीय प्राकृतिक अधिकार है, किन्तु इनको सामाजिक विश्व में शनैः–शनैः ही मान्यता मिली। अपने विकास के लिए विशिष्ट ऐतिहासिक कालखण्ड में किस प्रकार मानवाधिकारों को कोई एक आयाम कोई एक पक्ष प्रबल रहा– इसके आधार पर मानवाधिकारों का

RRIJM 2015, All Rights Reserved

ऐतिहासिक विकासक्रम दर्शाया जाता रहा है, और इस विकासक्रम का वर्गीकरण बहुधा तीन पीढ़ी सिद्धान्त (Three Generation Theory) के आधार पर किया जाता है। प्रथम पीढ़ी राजनीतिक मानवाधिकारों पर, द्वितीय पीढी सामाजिक–आर्थिक मानवाधिकारों पर, तो हमारी समसामयिक मानवाधिकारों की तीसरी पीढी–विभिन्न सामाजिक–सांस्कृतिक समूहों के मानवाधिकारों, राष्ट्रीय आत्मनिर्णय एवं विकास के अधिकार जैसे अधिकारों पर बल देती है।

अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार विधि को तीन वर्गों में वर्गीकृत किया गया है। नागरिक और राजनीतिक अधिकारों को ''प्रथम संतुति के अधिकार'' कहा जाता है। जबकि सामाजिक और आर्थिक अधिकारों को ''द्वितीय संतुति कें अधिकार'' कहा जाता है। प्रथम प्रकार के अधिकार पश्चिमी उदारवादी, लोकतांत्रिक व राजनैतिक परम्पराओं को अभिव्यक्त करते हैं जबकि दूसरे प्रकार के अधिकार साम्यवादी विश्व में प्रचलित अधिकारों की समाजवादी धारणा का प्रतिनिधित्व करते हैं। किन्तु विश्व राजनीति में तृतीय विश्व के देशो के अभ्युदय के साथ 1970 के तथाकथितः तृतीय 'संतति के अधिकारों' के लिए संघर्ष प्रकाश में आया। ये अधिकार 'सॉलिंडेरिटी राइट्स' या ''जन अधिकार'' के नाम से भी जाने जाते हैं। वस्तुतः ये समुह–अधिकार हैं।

तृतीय संतति के अधिकारों की सूची अपेक्षाकृत छोटी है, किन्तु दिन–प्रतिदिन इसका विस्तार हो रहा है। इनमें से कुछ अधिकार हैं– व्यक्ति के आत्मनिर्णय का अधिकार, विकास का अधिकार, अपने विकास के लिए अनुकूल एवं संतोषजनक वातावरण पाने हेतु व्यक्तियों का अधिकार, शांति का अधिकार आदि। इन अधिकारों की समस्या यह है कि इनका क्रियान्वयन सभी सदस्य राष्ट्रों के मध्य अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग होने पर ही हो सकता है। निर्विवादतः, हमारे समस्त मानवाधिकारों का सम्मान होना चाहिए। इन समस्त मानवाधिकारों का वर्गीकरण प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय पीढ़ी के मानवाधिकारों के रूप में किया जाता है। आज मानवाधिकारों के विशेषज्ञ विद्वान इस वर्गीकरण से सहमत है और तीन पीढी सिद्धान्त पदबंध का प्रयोग आज किसी विशिष्ट पीढ़ी के मानवाधिकार को उद्धृत करने के लिए किया जाता है।

मानवाधिकारों के तीन पीढियों में वर्गीकरण करने का श्रेय चेक न्यायशास्त्री कार्ल बासाक का है, जिन्होनें 1979 में स्ट्राटसबर्ग में मानवाधिकारों के अन्तर्राष्टथान में मानवाधिकारों को तीन पीढियों में देखे–समझे जाने का प्रस्ताव रखा था। वास्तव में वासाक इस पदबंध का प्रयोग इससे पूर्व 1977 में ही कर चुके थे। वासाक के सिद्धान्तों की जड़े यूरापीय विधि विज्ञान में थी, क्योकि वे अधिकाशतः यूरोपीय मूल्यों को प्रतिबिम्बत करते थे। वासाक का वर्गीकरण मूलतः फ्रांसीसी राज्य क्रान्ति के तीन महान शब्दों स्वतंत्रता समानता और बधुत्व का अनुसरण करता था। यद्यपि मानवाधिकारों की ये तीन पीढीयां यूरोपीय सघं के मानवाधिकारों के अधिकार–पत्र में भी कुछ फेरबदल के साथ प्रतिबिम्बित होती है तथापि मानवाधिकारों को तीन पीढीयों में वगीर्कृत करने का वास्तविक ऐतिहासिक आधार भी है।

मानवाधिकारों की प्रथम पीढ़ी (First Generation Human Rights)

प्रथम पीढ़ी के मानवाधिकारों का सैद्धान्तिक सूत्रीकरण 17 वीं एवं 18 वीं सदी में हुआ और ये मूलतः राजनीतिक आयाम लिए हुए थे। इस पीढ़ी के मानवाधिकारों की कार्य सूची में सुरक्षा का अधिकार, सम्पत्ति का अधिकार एवं राजनीतिक सहभागिता के अधिकार प्रमुख रूप से शामिल थे। ये मानव अधिकार विशिष्ट रूप से 1789 के मानव एवं व्यक्ति के अधिकारों के फ्रांसीसी घोषणापत्र एवं 1776 की अमेरिका स्वतंत्रता की उद्घोषणा से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित एवं इनसे प्रभावित रहे हैं। ये मानवाधिकार अधिकांशतः अपनी प्रकृति में नकारात्मक है (यथा– दास न बनाये जाने उत्पीडित् न किए जाने का अधिकार)। इन अधिकारों में धार्मिक स्वतंत्रता, स्वतंत्र अभिव्यक्ति एवं निष्पक्ष सुनवाई के अधिकार प्रमुख रूप से गिनाए जा सकते हैं। प्रथम पीढ़ी के मानवाधिकार अनिवार्यतः स्वतंत्रता एवं राजनीतिक जीवन में सहभागिता की मांगों से सम्बन्धित है। वे अपने स्वरूप में नागरिक एवं राजनीतिक चरित्र के हैं और इनका उद्देश्य व्यक्ति को राज्य के उत्पीड़न, अयाचित हस्तक्षेप से बचाना है। इनको वैश्विक रूप में प्रथम बार 1948 में मान्यता मिली, जब संयुक्त राष्ट्र सघं द्वारा मानवाधिकारों का सार्वभौम घोषणापत्र जारी किया गया।

नागरिक अधिकार व्यक्ति के भौतिक एवं नैतिक पक्षों पर राज्य का न्यूनतम हस्तक्षेप करते हुए उन्हें विश्वास एवं अन्तःकरण की स्वतंत्रता प्रदान करते है। उदाहरणार्थ– समानता एवं स्वतंत्रता का अधिकार, किसी भी धार्मिक मत को मानने की स्वतंत्रता एवं अपने मत को व्यक्त करने की स्वतंत्रता एवं वे अधिकार जो व्यक्ति को उत्पीड़न न करने या उसकी हत्या न करने को प्रत्याभूत करते हैं। नागरिक अधिकारों में वे कानून/विधिक अधिकार भी सम्मिलित हैं जो व्यक्ति को कानूनी या राजनीतिक व्यवस्था से प्रक्रियागत सुरक्षा प्रदान करते हैं– उदाहराणार्थ, मनमानी गिरफ्तारी पर रोक, जब तक दोष सिद्ध न हो जाय तब तक निर्दोष समझे जाने का अधिकार और अपील (निर्णय के विरूद्ध सुनवाई) करने का अधिकार। किसी समाज एवं समुदाय के जीवन में सहयोगिता हेतु राजनीतिक अधिकार अनिवार्य है– उदाहराणार्थ, मत देने का अधिकार, राजनीतिक दलों की सदस्यता लेने का अधिकार, स्वतंत्रतापूर्वक एकत्रित होने व सभा करने का अधिकार, किसी के द्वारा अपना मत व्यक्त करने का अधिकार एवं सूचना तक पहुंच का अधिकार आदि। भारतीय संविधान में भाग–3 में उपबंधित मूल अधिकारों में प्रथम पीढ़ी के मानवाधिकारों का अधिकांशतः प्रतिबिम्बन देखा जा सकता है।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

मानवाधिकारों की प्रथम पीढ़ी को बहुधा नीले अधिकार कहा जाता है। ये अपनी प्रकृति में नकारात्मक हैं, और राज्य के अनावश्यक हस्तक्षेप से व्यक्ति की रक्षा करते है। इन अधिकारों को प्रत्याभूत करने वाले महत्वपूर्ण मील के पत्थरों में संयुक्त राज्य अमेरिका का बिल ऑफ राइट्स, फ्रासं का मानव एवं नागरिकों को अधिकारों का घोषणापत्र माने जाते हैं, यद्यपि इन अधिकारों में से कुछ अधिकार पूर्व से ही मान्य थे, जिन्हे 1215 में मैग्ना कार्टा (महाधिकार पत्र) एवं 1689 के अंग्रजी बिल ऑफ राइट्स में स्थान मिला हुआ था। प्रथम पीढ़ी के मानवाधिकार मुख्यताः अपनी प्रकृति में 'नागरिक–राजनीतिक' मानवाधिकार है। इनका सम्बन्ध स्वतंत्रता एवं राजनीतिक जीवन में सहभागिता से है। ये अधिकार मूलतः व्यक्तिवादी हैं और पूंजीवाद के फलने–फूलने हेतु राजनीतिक आधार प्रदान करते हैं।

द्वितीय पीढ़ी के मानवाधिकार (Second Generation Human Rights)

द्वितीय पीढ़ी के मानवाधिकार इस बात से सम्बन्धित हैं कि लोग साथ–साथ केसै रहते एवं कार्य करते हैं। ये जीवन की बुनियादी जरूरतों को स्वर देते हैं। ये अधिकार समानता के विचार एवं आश्यक सामाजिक एवं आथिक वस्तुओं, सेवाओं एवं अवसरों तक सभी की प्रत्याभूत समान पहुंच पर बल देते हैं। इनको यूरोप में औद्योगीकरण के प्रारम्भ एवं कामगार वर्ग के उदय के साथ–साथ अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता मिलनी आरम्भ हुई। इन अधिकारों ने जीवन के नए अर्थ एवं मानवीय गरिमा के नवीन अर्थ– संदर्भ उद्घाटित किए। लोगों ने महसूस किया कि जीवन की गरिमा को वास्तव में प्राप्त करने के लिए मात्र नागरिक व राजनीतिक अधिकारों से काम नही चल सकता। जब 18 वीं सदी में रूसो ने फ्रांसीसी पूंजीवादी जीवन की विद्रुपताओं एवं औद्योगिक क्रान्ति से उपजे अलगाव, असमानता, यंत्रणा को स्वर देते हुए स्वतंत्र पैदा हुए मनुष्य के बंधनो की ओर संकेत किया, तो उसने मानवाधिकारो ंकी प्रथम पीढ़ी के साथ दूसरी पीढ़ी के अधिकारों को भी व्यक्ति को प्रदान किए जाने की वकालत की।

द्वितीय पीढ़ी के मानवाधिकारों को लाल अधिकार भी कहा जाता हैं। ये अपनी प्रकृति में ''सामाजिक–आर्थिक'' है। ये समानता, उसमें भी विशेषतः आर्थिक समानता पर अपना ध्यान केन्द्रित कर सभी के लिए समान दशाओं, अवसरों एवं व्यवहारों की मांग करते हैं। ये अधिकार राज्य पर सकारात्मक उत्तरदायित्व डालते हैं।

दूसरी पीढ़ी के मानवाधिकारों का स्वर्णिम शब्द समानता है, जिसे सरकारो ं ने प्रथम एवं द्वितीय विश्व युद्धों के पश्चात् मान्यता देना प्ररम्भ किया। इन अधिकारों का सैद्धान्तिक सूत्रीकरण 1966 के संयुक्त राष्ट्र सघं के आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारो ं की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा में किया गया। इनमें कुछ अधिकार मरनवाधिकारों अन्तर्राष्ट्रीय घोषणापत्र में भी मिल जाते हैं। दूसरी पीढ़ी के मानवाधिकार अपने स्वरूप में अनिवार्यतः आथिर्क –सामाजिक एवं सास्कृतिक हैं और इसकी प्रकृति सकारात्मक है– जैसे दूसरों के द्वारा कुछ दिए जाने का अधिकार।

सामाजिक अधिकार वे अधिकार हैं जो सामाजिक जीवन में पूर्ण सहभागिता हेतु आवश्यक हैं। इनमें कम से कम शिक्षा का अधिकार, परिवार बनाने व बसाने का अधिकार तो शामिल हैं ही, किन्तु इनमें कई ऐसे अधिकार भी शामिल हैं जिन्हें नागरिक अधिकारो ं की श्रेणी में रखा जाता है, यथा– सामाजिक सरुक्षा का अधिकार, मनोरंजन का अधिकार, स्वास्थ्य लाभ, भेदभाव से मुक्ति आदि के अधिकार। आर्थिक अधिकरों में सामान्यताः आर्थिक कल्याण, काम करने, रोजगार, न्यूनतम जीवन स्तर प्राप्त करने, आवास एवं विकलांग/वृद्ध होने पर पेशंन पाने के अधिकार सम्मिलित है। द्वितीय पीढ़ी के आर्थिक मानवाधिकार यह दर्शाते है कि मानवीय गरिमा की अक्षुण्णता हेतु भैतिक सुरक्षा का निम्नतम स्तर होना आवश्यक है। यही नही, सार्थक रोजगार एवं आवास के अभाव में जीवन अभिशाप हो सकता है। सांस्कृतिक अधिकार किसी समुदाय के सांस्कृतिक जीवन को दर्शाते है जिन पर किसी अधिकार की अपेक्षा अत्यन्त कम ध्यान दिया गया है। इन अधिकारों में किसी समुदाय के सामुदायिक जीवचन में स्वतुत्रतापूर्वक सहभागिता करने और सम्भवतः शिक्षा का अधिकार भी सम्मिलित है। ऐसे अनेक अधिकार, जिनमें औपचारिक रूप से सांस्कृतिक अधिकार– जैसे भारत में अल्पसंख्यकों को अपनी भाषा, लिपि एवं संस्कृति को संरक्षित करने का मौलिक अधिकार प्राप्त है।

मानवाधिकारों की तीसरी पीढ़ी (Third Generation Human Rights)

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्य मानवाधिकारों की सूची निरन्तर संशोधित–परिवर्धित होती रही है। यद्यपि मानवाधिकारों के अन्तर्राष्ट्रीय घोषणापत्र में किसी भी अधिकार को सूचीबद्ध नहीं किया गया था जिसमें 1950 के दशक में प्रतिक्रियाएं हुई एवं प्रश्न उठे। जिससे कई नई संधियां हुई एवं मानवाधिकार के अन्तर्राष्ट्रीय घोषणापत्र में किसी भी अधिकार को सूचीबद्ध नही किया गया था जिसमें 1950 के दशक में प्रतिक्रियाएं हुई एवं प्रश्न उठे। जिससे कई नई संधियां हुई एवं मानवाधिकारों पर अभिलेख जारी किए गए। इससे 1948 के मूल दस्तावेज में निबद्ध मूल अवधरणाओ से कुछ और नई अवधारणाएं विकसित की गई और मानवाधिकारों में स्थान दिया गया। मानवाधिकारों में यह और कुछ जोड़ा जाना, कई कारणों का परिणाम था। ये परिवर्तन अंशतः इसलिए हो रहे थे कि मानवीय गरिमा का अर्थ बदल गया था और अंशतः ये तकनीकी परिवर्तनों एवं इन परिवर्तनों के कारण नित नवीन उभरते खतरो एवं चुनौतियों के परिणाम थे। अब मानवाधिकारों की विशिष्ट श्रेणियों के रूप में तीसरी पीढ़ी के मानवाधिकारों का प्रस्ताव उन

RRIJM 2015, All Rights Reserved

कठिनाईयों/बाधाओं की उस गहन समझ का परिणाम था जो प्रथम पीढ़ी एवं द्वितीय पीढ़ी के मानवाधिकारों के उपभोग को असंभव बना देती थी। द्रुत वैश्वीकरण ने भी इन बाधाओं के निराकरण हेतु संसाधनों के पुनर्वितरण की संभावना का उद्घाटन किया।

तीसरी पीढ़ी मानवाधिकार सिद्धान्त पदबंध का आज भी अनौपचारिक रूप से प्रयुक्त किया जाता है, जिसमें अधिकारों की अत्यन्त व्यापक सूची सम्मिलित है। समाजों या लोगों की एकता एवं सामुहिक अधिकार इस पीढ़ी के मानवाधिकारों का मेरूदण्ड हैं जो मात्र नागरिक या सामाजिक अधिकारो ं से अधिक व्यापक हैं। वे विशिष्ट अधिकार, जिसकी तीसरी पीढ़ी के मानवाधिकाररों में गणना की जाती है, उनमें शामिल है– राष्ट्रीय आत्मनिर्णय का अधिकार, विकास या पोषणीय विकास, शान्ति, स्वस्थ पर्यावरण का अधिकार मानव की साझी विरासत के दोहन का समान अधिकार, मानवीय सहायता प्राप्त करने का अधिकार, देशी अल्पसंख्यक समूहों एवं समुदायों के अधिकार (बहसु संस्कृतिवाद) आदि। इन सामुहिक अधिकारों में से कतिपय अधिकारों को अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अनेक प्रगतिशीत दस्तावेजों में मान्यता प्रदान की गई है इनमें मानवीय पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन की स्टॉकहोम घोषणा (1972), पयार्वरण एवं विकास पर रियो घोषणा (1992), मानव के अधिकारों का अफ्रीका अधिकार पत्र (1981) और कुछ ऐसे अन्य दस्तावेज, संधियां, प्रांविदाएं सम्मिलित हैं, जिनका सदैव अनुपालन न हो सकने के कारण जिन्हें, बहुधा कोमल कानून (Soft Law) की संज्ञा दी जाती हैं। मानवाधिकारों के सार्वभौम घोषणपत्र (1948) में भी राष्ट्रीय आत्मनिर्णय के अधिकार को मान्यता दी गई है और 1986 में संयुक्त राष्ट्र महासभा में विकास के मानवाधिकार को संहिताबद्ध किया गया है। यद्यपि तीसरी पीढ़ी के मानवाधिकार पहली दो पीढी के मानवाधिकारो की भांति मूलभूत नही है, किन्तु इसका तात्पर्य यह नही है अधिकारों के विधिशास्त्र का विकास नही होता। मानवाधिकारों की संकल्पना भी निरन्तर गतिशील है।

तृतीय पीढ़ी के मानवाधिकारों को ''हरित अधिकार'' भी कहा जाता है। में मूलतः सभी के सामूहिक विकास की बात करते हैं।

मानवाधिकारों की उपरोक्त पीढ़ियों और उनके अन्तर्गत आश्वस्त अधिकार यद्यपि अर्न्तसम्बन्धित है, किन्तु ऐतिहासिक विकास के साथ–साथ इनमें आए परिवर्तन को विश्लेषित किया जाना भी आवश्यक हैं।

हालांकि मानवाधिकारों की जड़े विभिन्न रूपों में अतीतकाल में भी विद्यमान थीं परन्तु 20वी शताब्दी में यह एक लोकप्रिय विषय बन गयी। आधुनिक इतिहास में मानव अधिकारों के प्रति अतंर्राष्ट्रीय रूचि समय–समय पर दास व्यापार और दासता के विरूद्ध एक योजनाबद्ध कार्यक्रम के रूप में दिखाई देती है। इसके अतिरिक्त युद्ध के मानवीय कानून, अल्पसंख्यकों का संरक्षण, महिलाओं का उद्धार, इंग्लैण्ड का मैग्नाकार्टा (1215), अमेरिका की स्वतंत्रता का घोषणापत्र (1776) और रूस की बोल्शेविक क्रांति (1917) मानवाधिकारों की अवधारणा के विकास के महत्वपूर्ण उदाहरण माने जा सकते है। इन सब घोषणाओं और क्रांतियों ने मानवाधिकार की अवधारणा के विकास में महत्वपूर्ण सहयोग दिया है। तत्कालीन विशिष्ट परिस्थितियों की उपज होने के कारण ये अधिकार अपने कार्यक्षेत्र और प्रयासों में सीमित थे। दो विश्वयुद्धों के बीच के समय में मानवधिकारों का विचार मुख्यतः श्रमिकों के अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के कुछ कार्यों और राष्ट्र संघ द्वारा अल्पसंख्यकों के सरंक्षण के निश्चित प्रावधानों तक ही सीमित था और यह भी उत्तरकालीन कुछ देशों पर ही लागू होता था। रूस में 1917 की बोल्शेविक क्रांति ने मानव अधिकार को सामाजिक–आर्थिक न्याय और सामाजिक और आर्थिक अधिकारों तक विस्तार करके मानवधिकारों को एक नया आयाम दिया। 20 वीं शताब्दी के मध्य तक कुछ ऐतिहासिक तत्वों के परिणामस्वरूप मानवाधिकारों की अवधारणा को व्यापक समर्थन मिला और यह एक सर्वव्यापक अवधारणा के रूप में उभरी। द्वितीय विश्वयुद्ध से उत्पन्न भय ने आधुनिक मानवधिकारों की पहचान और जन्म का नेतृत्व किया। युद्ध के बाद अंतर्राष्ट्रीय कानून में मानवाधिकारों को प्रमुखता से शामिल किया गया।

मानवाधिकार को संयुक्त राष्ट्र संघ में सबसे पहले अंतर्राष्ट्रीय साधन के रूप में अभिव्यक्ति प्रदान की गई। संयुक्त राष्ट्र संघ में जांति, लिंग भाषा और धर्म के भेदभाव के बिना सभी व्यक्तियों को मानव अधिकारों की मौलिक स्वतंत्रता प्रदान की गई इस प्रकार संयुक्त राष्ट्र संघ ने एक नए स्वरूप के मानवाधिकारों का सूत्रपात किया गया। 10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा में मानवाधिकारों की उद्घोषणा की गई। संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के अंतर्गत 1945, 1948 में मानव अधिकारों का पहला महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय कानून बना। चार्टर में सार्वभौमिक मानवाधिकारों के संदर्भ तो दिए गए थे, परन्तु उनकी पुष्टि नहीं की गई थी। आज सार्वभौमिक मानवाधिकार के रूप में पहचाने जाने वाले अधिकारों को संयुक्त राष्ट्र की महासभा में बिना किसी मतभेद के स्वीकार कर लिया गया और उनकी उद्घोषणा कर दी गई। इसे मानव अधिकारों की सबसे पहला नियमावली बनाने का प्रयत्न कहा जा सकता है। यहाँ यह बताना महत्वपूर्ण है कि जो देश उद्घोषणा के कुछ प्रावधानों के प्रबल विरोधी थे वह भी इनको सिद्धांत के रूप में अस्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे। यह उद्घोषणा कई प्रसंविदाओं और अधिवेशनों की परिणाम थी। मानवाधिकारों की सार्वभौमिक उद्घोषणा 1948 की पहली धारा में घोषित किया गया है कि सभी व्यक्ति स्वंतत्र रूप से जन्म लेते हैं और मानवीय गरिमा और अधिकारों में समान है और हम सबको भ्रातृत्व की भवना के साथ

एक–दूसरे के साथ व्यवहार करना चहिए। यह प्रस्ताव संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा में पास हुआ था।

अतः सार्वभौमिक मानवाधिकारों को स्वीकार किया गया और महासभा द्वारा उनकी उद्घोषणा की गई। इस उद्घोषणा को निरन्तर ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय स्तर पर इन अधिकारों और स्वतंत्रताओं को शिक्षण–प्रशिक्षण तथा प्रगतिशील साधनों से इन अधिकारों और स्वतंत्रताओं के प्रति सम्मान को बढ़ावा दिया जाना चाहिए ताकि न्यायिक प्रक्रिया के अंतर्गत सार्वभौमिकता व प्रभावी मान्यता एवं निरीक्षण को सदस्य राष्ट्रों तथा प्रदेशों के लोगों के लिए उनकी सुरक्षा को सुनिश्चित किया जा सकेगा।

विश्व मानव अधिकार सम्मेलन (वियना सम्मेलन) 1993

मानव अधिकारों पर द्वितीय विश्व सम्मेलन, जिसे सामान्यतया वियना सम्मेलन कहा जाता हैं, 14 जून 1993 से 25 जून 1993 तक वियना में आयोजित हुआ। यह सम्मेलन तेहरान में हुये अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार सम्मेलन के 25 वर्ष बाद आयोजित किया गया तथा इस सम्मेलन में मानव अधिकारों की सार्वभौमिक धोषणा 1948 की उपलब्धियों का मूल्यांकन किया गया और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मानव अधिकार के क्षेत्र में आगे कार्य के लिये आधार तैयार किया गया। सम्मेलन में 171 राज्यों से 2100 प्रतिनिधियों ने तथा गैर–सरकारी संगठनों, अन्तर्सरकारी संगठनों, विशिष्ठ अभिकरणों एवं सयुंक्त राष्ट्र मानव अधिकार समितियों के 841 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सम्मेलन में वियना घोषणा और कार्य योजना को अंगीकार किया गया जिसके द्वारा मानव अधिकारों की अभिवृद्धि एवं संरक्षण के लिए अंतर्राष्ट्रीय समुदाय की प्रतिबद्धता को नविकृत किया गया।

वियना घोषणा की पंचवर्षीय क्रियान्वयन समीक्षा एवं 1998 की कार्ययोजना अंतर्राष्ट्रीय समुदाय को इस बात के लिए विवश करेगा कि वह सभी राज्यों, संयुक्त राष्ट्र प्रणाली तथा गैर–सरकारी संगठनों के सहयोग के साथ अन्य अंन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के द्वारा इन अधिकारों की प्रभावी अभिवृद्धि एवं संरक्षण को लक्षित करके दृढ़ कार्य के माध्यम से मानव अधिकारों के प्रति अपनी प्रतिबद्वता को पुनः अभिपुष्ट करे।

भारत में आवश्यक मानवाधिकारों को संविधान के मौलिक अधिकारों एवं राज्य के नीति–निर्देशक सिद्धान्तों वाले हिस्सों में शामिल किया गया है। ये अधिकार आज चरम दक्षिणपथियों के हमले का निशाना है। लोकतंत्र समर्थकों और मानवतावादियों के लिए आज भारत में मानवाधिकार–दिवस मनाने का सर्वोत्तम तरीका यही हैं कि वे लोगों को मौलिक अधिकारों और नीति–निर्देशक तत्वों को समझाएं और इन पर अमल के लिए समर्थन जुटाये।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने 10 दिसम्बर, 2016 को नई दिल्ली में मानव अधिकार दिवस समारोह का आयोजन किया। मुख्य अतिथि के रुप में सभा को संम्बोधित करते हुए न्यायमूर्ति श्री पी0 सदाशिवम्, केरल के राज्यपाल तथा भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश ने कहा कि देश में मानव अधिकारों का संरक्षण सुनिश्चित करने के लिए अनेक कानूनो एवं उनके विषय में जागरुकता की कमी तथा कानून व्यवस्था की अप्रर्याप्तता तथा विधिक सेवा प्राधिकारियों से अप्रर्याप्त समर्थन पर ध्यान केन्द्रीत करने की आवश्यकता है। अधिकार का अभिप्राय राज्य द्वारा व्यक्ति को दी गई कुछ कार्य करने की स्वत्रतां या सकारात्मक सुविधा प्रदान करना है। जिससे व्यक्ति अपनी शारीरिक मानसिक एवं नैतिक शक्तियों का पूर्व विकास कर सके।

लूईस हेन्फिन का कहना है कि, ''आज मानव अधिकार सभी जगह, अच्छे'' के रुप में जाने जाते है, फिर भी आज ये व्यग्रता का स्त्रोत, व विवाद का केन्द्र बने हुए है।

निष्कर्ष –

मानवाधिकारों की पृष्ठभूमि का इतिहास प्रकृति के नियमों से प्रारम्भ होकर मानव की चरमोंत्कृष्ट सभ्यता के इतिहास पर आधारित है। अधिकारों का ऐतिहासिक क्रम ही इसके विकास की गाथा को उजागर करता है। सम्बन्धित गाथा प्रत्येक समाज की परिस्थितियों, समय और राजसत्ता के स्वरूप पर आधारित होती है। मानव संघर्ष की गतिविधियों के कारण ही मानव ने एक दूसरे राष्ट्रों पर आक्रमण किया है। जिसके परिणामस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अशान्ति का वातावरण उत्पन्न होने लगा। इस प्रकार के वातावरण ने आन्तरिक तथा बाह्य रूप से मानव के अधिकारों का उल्लंघन किया। मानवाधिकारों के आन्तरिक उल्लंघन का इतिहास चिरकाल से चला आया है, क्योंकि इसका सम्बन्ध राष्ट्र विशेष की सत्ताओं के साथ रहा है, जबकि अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकारों का विकास बीसवीं शताब्दी के मध्य का है। अन्तर्राष्ट्रीय विकास से सन् 1948 में मानवाधिकार शब्द का नामकरण हुआ।

यह कहना समीचीन होगा कि मानवाधिकारों का उद्भव व्यक्ति के अस्तित्व में आते ही प्रारम्भ हुआ है, लेकिन इसका स्वरूप सभ्यता के साथ–साथ परिवर्तित आया गया। इसलिये प्रारम्भ में आत्मरक्षा का अधिकार, राज सत्ताओं के जन्म के पश्चात राजनैतिक, सामाजिक आर्थिक और विधिक अधिकार कहा गया तथा सम्प्रत्ति इन अधिकारों को मानवाधिकार कहा जाता है। मानवाधिकारों की पृष्ठभूमि का इतिहास प्रकृति के नियमों से प्रारम्भ होकर मानव की चरमोंत्कृष्ट सभ्यता के इतिहास पर आधारित है। अधिकारों का ऐतिहासिक क्रम ही इसके विकास की गाथा को उजागर करता है। सम्बन्धित गाथा प्रत्येक समाज की परिस्थितियों, समय और राजसत्ता के स्वरूप पर आधारित होती है। मानव संघर्ष की गतिविधियों के कारण ही मानव ने एक दूसरे राष्ट्रों पर आक्रमण किया है। जिसके परिणामस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय स्तर

RRIJM 2015, All Rights Reserved

पर अशान्ति का वातावरण उत्पन्न होने लगा। इस प्रकार के वातावरण ने आन्तरिक तथा बाह्य रूप से मानव के अधिकारों का उल्लंघन किया। मानवाधिकारों के आन्तरिक उल्लंघन का इतिहास चिरकाल से चला आया है, क्योंकि इसका सम्बन्ध राष्ट्र विशेष की सत्ताओं के साथ रहा है। निष्कर्षतः यह कहना समीचीन होगा कि मानवाधिकारों का उद्भव व्यक्ति के अस्तित्व में आते ही प्रारम्भ हुआ है, लेकिन इसका स्वरूप सभ्यता के साथ–साथ परिवर्तित हुआ है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

[1]. शर्मा, शिवदत, 'मानव आधिकार', विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय भारत सरकार, 2006
[2]. श्रीवास्तव, सुधारनी, 'भारत मे मानवधिकार की अवधारणा', अर्जून पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2006
[3]. बिसवाल, तपन, 'मानवधिकार : जेन्डर एंव पर्यावरण', विवा बुक्स प्राईवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2008
[4]. सैनी, इन्दु, 'मानवधिकार और महिला', स्वेता मल्टीमिडिया, राजस्थान, 2011
[5]. सारस्वत, माध्वानन्द, 'मानवधिकार एक अवलोकन', सजना प्रकाशन, राजस्थान, 2011
[6]. विप्लव, 'भारत में महिला मानव आधिकार', राहुल पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ, 2012
[7]. भट्ट, लज्जा, 'संस्कृत साहित्य में माानवाधिकार', क्वैस्ट, 2014, 8(1),
[8]. अग्रवाल, एच0 ओ0, 'मानव अधिकार', सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद, 2014
[9]. चतुर्वेदी, मधुमुकुल, 'मानवधिाकारः अवधारणा', विकास, दर्शन एंव प्रकृति, भारतीय राजनीति विज्ञान शोंध पत्रिका, 2015, 7 (2),
[10]. साह, बी0 एल0 एवं कलौनी चन्द्र कैलाश, 'मानवाधिकार', अंकित प्रकाशन हल्द्वानी, 2016
[11]. हयूमन राइट्स समाचार, अंक 24, सं0 1 जनवरी, 2017

RRIJM 2015, All Rights Reserved